3033 Shri Narayana Guru

श्री नारायणगुरु

संपादक

श्री. पी. जे. जोसफ

(हिन्दी लेक्चरर, मार ईवान्योस कालेज, तिरुवनन्तपुरम)

विद्वान श्री. के. पी. परमेश्वरन पिल्लै B. Sc. (Eng.)

(अध्यापक, राष्ट्रभाषा मंदिर, तिरुवनन्तपुरम)

विद्वान श्री. के. वी. कृष्णनकुट्टि B. A; साहित्यरत्न

(अध्यापक, राष्ट्रभाषा मंदिर, तिरुवनन्तपुरम)

1478

MOHAN PUBLICATIONS.

राष्ट्र भाषा साहित्य समिति

स्टादयूरोड त्रिवेन्द्रम-१

Standard VIII Book No. 2

This is a bad story

By

NMS.

श्री नारायण गुरु

EL ISLAM HIGH SCHOOL
3033
ERNAKULAM

संपादक

श्री. पी. जे. जोसफ़

(हिन्दी लेक्चरर, मार ईवान्योस कालेज, तिरुवनन्तपुरम)

विद्वान श्री. के. पी. परमेश्वरन पिल्लै B. Sc. (Eng.)

(अध्यापक, राष्ट्रभाषा मंदिर, तिरुवनन्तपुरम)

विद्वान श्री. के. वी. कृष्णनकुट्टि B. A; साहित्यरत्न

(अध्यापक, राष्ट्रभाषा मंदिर, तिरुवनन्तपुरम)

★

प्रकाशक

श्री. के. प्रभाकरन नायर

काबुविला हाउस,

जगति, तिरुवनन्तपुरम ।

दाम ५० नये पैसे

SREE NARAYANA GURU

(LIFE HISTORY)

FIRST IMPRESSION, COPIES 1500

1957

PUBLISHER

SRI. K. PRABHAKARAN NAIR

KAVUVILA HOUSE

JAGATHY, TRIVANDRUM.

All rights reserved]

[*Price 50 nP.*

संपादकीय

हमारे छात्र-जगत् में उपयोगी हिन्दी पुस्तकों के नितांत अभाव ने विद्यार्थियों की बौद्धिक प्रगति को अवरुद्ध किया है। उस अभाव की सर्वांगीण पूर्ति का विनम्र प्रयास है, यह पुस्तकमाला। इसमें रचना की लोकप्रियता तथा अक्लिष्टता केलिए प्रचलित संस्कृत शब्दों का प्रयोग एवं केरल के छात्रमण्डल की प्रबुद्ध बौद्धिकता के अनुरूप वस्तु-व्यंजना—ये दोनों कार्य अध्यापनकला में अपने विपुल अनुभव के आधार पर हमारे निष्कर्ष हैं।

प्रबंध, नाटक, जीवनी, गल्प आदि विभिन्न रूपों के द्वारा विज्ञान, धर्म्म, कला, संस्कृति—सभी क्षेत्रों का संस्पर्श करके विद्यार्थियों में महत्वाकांक्षा जाग्रत कर, एक सांस्कृतिक चेतना फैलाने का प्रयास आप इन पन्नों पर देख सकेंगे। बौद्धिक विकासक्रम में छात्रों के विभिन्न स्तरों को ध्यान में रखकर उसी के अनुरूप सभी पुस्तकों की रचना की गयी है। यहाँ तक कि कठिन शब्दों की अर्थ-सूची तथा मुहावरों का प्रयोग भी क्रम क्रम से प्रस्तुत हैं। स्तर पर स्तर ये मृदुल श्रम-सीकर सागर-से चिर सुंदर बन जाएँ।

* * * *

शीघ्रता के कारण यत्र-तत्र जो त्रुटियाँ हुई हैं उन्हें सहृदय पाठक गण क्षमा करें।

इस किताब के बारे में

बडे बडे महात्माओं को जन्म देने का सौभाग्य केरलमाता को मिला है। उसकी सन्तानों में साहित्यकार, कलाकार, वीर, देशप्रेमी, समाज-सुधारक आदि कितने ही महात्मा हैं। एक समाज-सुधारक के रूप में श्री नारायण गुरु का नाम केरल में विख्यात है। जिस कार्य के लिए उन्होंने अपने जीवन का समर्पण किया था उस पर प्रकाश डालने का प्रयत्न इस किताब में किया गया है।

पी. जे. जोसफ़

श्री नारायणगुरुस्वामीजी

१. यह महान देश।

केरल! प्रकृतिमाता की प्यारी संतान! कितनी सुन्दर है! कैसी सुखदायिनी है! कितनी प्रेममयी है! यह कलावन्तो[1] की कामिनी है, वीरप्रसविनी[2] है, वीतरागों की विधात्री[3] है।

हज़ारों वर्ष पहले की बात है। भृगुपुत्र ने फरसा फेंका। कन्याकुमारी साक्षी रही। गोकर्ण पर फरसा गिरा। महासमुद्र ने भारतमाता के पैरों पर[4] इस छोटी सी बालिका को अर्पण किया। भार्गव-क्षेत्र की उत्पत्ति हुई।

मलय पवन बह चला। सह्याद्रि ने नादियाँ बहा दी। उनके निर्मल जल में इलायची की सुगंधि थी। काली

---

1. कलावन्त = कलाकार
2. वीरप्रसविनी = वीरों को जन्म देनेवाली
3. वीतरागों की विधात्री = त्यागियों की जननी
4. पैरों पर = पादतलों पर

मिर्च की सुरभि थी । कल्पवृक्ष नारियल उग आया[1] । केरल-वधूटी[2] संतानों का स्वागत करने उठ खडी हुई ।

उत्तर से आर्य आया । पूर्वोत्तर से नाग आया । लंका से सिंहल आया । सह्य के गिरिसंकटों को पारकर[3] द्राविड भी आया । केरल में एक नयी जाति उठ खडी हुई । पूर्व में हस्तिव्याघ्रादि पशुओं[4] से भरा वन-पर्वत — पच्छिम में नितान्त गर्जन करता हुआ महासमुद्र — इन दोनों के बीच में केरल की जनता निडर होकर[5] आगे बढी ।

वनपर्वतों में उसने बाग बनाये । हाथी उसका आज्ञाकारी नौकर बना । महासमुद्र का गर्जन उसे कोई गुप्त सन्देश सुनाता रहा । "बढो, बढो" का वह सन्देश उत्तुंग तरंगो पर चढकर, मलयानिल पर आरूढ होकर[6] गूँजने लगा, अब भी गूँज रहा है ।

इस देश के विभवों की कीर्ति दूर दूर तक फैल गयी । विदेशी उनसे आकर्षित होकर आने लगे । अरब आये । यहूदी आये । ईसाई आये । गोरे आये । सब शांति का

---

1. उग आया = बीज से निकल आये
2. केरल–वधूटी = केरल रूपी वधू
3. गिरिसंकटों को पार कर = पर्वतीय मार्गों को तरण कर
4. पशु = जानवर 5. निडर होकर = निर्भय होकर
6. आरूढ होकर = चढकर

सन्देश लेकर आये। केरल की संस्कृति बढती गयी। उसका दृष्टिकोण विशाल हुआ। भावनाएँ उदार बनीं। अभिलाषायें उन्नत हुई। केरल अपने निजत्व का झंडा[1] लिए आगे बढी।

ऐसी उत्कृष्ट भूमि में महात्माओं का जन्म होता ही है। यह तो आश्चर्य की बात नहीं। यहाँ बडे बडे वीर योद्धा और आदर्श राजा पैदा हुए थे। तच्चोळी तेनन केरलीय वीरता का प्रतीक है। पेरुमचोट्टुदयन कुरुक्षेत्र के महायुद्ध में शत्रु-मित्र दानों को रसद देता था। चेंकुट्टुवन ने हिमालय तक जैत्रयात्रा[2] की थी। मानविक्रमन, शक्तन तंपुरान, मार्ताण्डवर्मा आदियों का नाम केरल के इतिहास में सुवर्ण लिपियों में अंकित हैं।

केरल कलावन्तों का देश है। साहित्य, संगीत, नृत्य, चित्रकला, वास्तुकला, जोतिष सभी में केरल के अपनी शैली है। रामानुजन एषुत्तच्छन, कुञ्चन नंबियार, स्वातितिरुनाळ, कोट्टयम तंबुरान, केरलवर्मा आदि इस देश के असंख्य कलाकारों में से हैं।

---

1. निजत्व का झंडा = व्यक्तित्व की पताका
2. जैत्रयात्रा = विजय यात्रा

आध्यात्मिकता के क्षेत्र में भी केरल पीछे नहीं रही है। बौद्धधर्म की बाढ में भारत भर का सनातन हिन्दू धर्म बह जानेवाला था। तब उसकी रक्षा की थी आदि-शंकराचार्य ने। आदिशंकराचार्य तो केरलीय थे। कालडी नामक स्थान पर उनका जन्म हुआ था।

केरलीयों का धार्मिक दृष्टिकोण आरंभ से ही उदार रहा है। यहाँ हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सब भाई-भाई हैं। मसजिद से लगकर[1] मन्दिर बना है। मन्दिर के सामने गिरजा है। कोई झगडा नहीं, कोई फिसाद नहीं।

लेकिन कभी कभी इस प्रशांत सुन्दर वातावरण में अशान्ति के काले बादल उमड आये[2] हैं, उमड आते भी हैं। यह तो नैसर्गिक मात्र है। मनुष्य के अपनी दुर्बलताएँ होती हैं। स्वार्थमूलक वासनाएँ उसे कभी कभी[3] दबाती हैं। परन्तु केरलीय के संबन्ध में यह दबाव क्षणिक मात्र रहा है। क्योंकि उसकी संस्कृति ऐक्यमूलक है, उदार है, उज्वल है। कभी कभी वह पथभ्रष्ट[4] हो जाता है। तब तो कोई उज्वल

---

1. से लगकर = के निकट
2. उमड आना = उठ कर फैलाना
3. कभी कभी = Some time
4. पथभ्रष्ट हो जाना = पथ से विचलित हो जाना

नक्षत्र उसे दिखाई पडता है। उसके सहारे वह ठीक रास्ते पर आ जाता है।

केरल की इस उदार तथा उज्वल संस्कृति में कुछ वर्ष पहले एक तारा उदित हुआ था। वह अपनी शीतल किरणों को बिखेरकर अस्त हो गया। फिर भी उसके प्रकाश की तरंगें दिगन्तों में[1] फैल रही है। वह पवित्र नक्षत्र है श्री नारायणगुरुस्वामिजी। उनकी संक्षिप्त जीवनी आगे के परिछेदों में पढें।

प्रश्न

1. केरळ की उत्पत्ति के संबन्ध में क्या जानते हैं?
2. केरळीय जनता कैसे बनी?
3. केरल के पुराने वीर पुरुषों का नाम बताओ।
4. शंकराचार्य कौन थे? उन्होंने क्या किया?

---

1. दिगन्तों में = दिशाओं में

२. सामाजिक परिस्थिति

श्रीनारायण गुरु स्वामीजी के जन्म के समय केरल की सामाजिक परिस्थिति कैसी थी, इस पर पहले ध्यान देना[1] आवश्यक है। संसार में कई महात्माओं का जन्म हुआ, है। श्री बुद्ध का जन्म हुआ, ईसा का जन्म हुआ, हज़रत मुहम्मद का जन्म हुआ और कई महात्मावों का भी जन्म हुआ। किसी महात्मा के जन्म के समय उस देश की सामाजिक परिस्थिति कैसी थी, इसका अध्ययन करें तो हम समझ सकेंगे कि इस महात्मा उस युग की सृष्टि है, देन है। समाज में कई प्रकार की बुराइयाँ आ जाती हैं। तब तो उन्हें दूर करने के लिए एक महात्मा प्रकट होते हैं। श्रीनारायण गुरु की भी यही बात है।

उस समय केरल की सबसे बडी सामाजिक बुराई वर्ण-भेद थी। हर समाज के भिन्न भिन्न श्रेणियाँ थीं। कोई ऊँची थी, कोई नीच। यहाँ के हिन्दू समाज में ब्राह्मण और नायर ऊँची श्रेणी के थे। वे सवर्ण कहलाते थे। ईषव, पुलय, परय आदि को वे नीच समझते थे। उनको अवर्ण कहते थे। उन्हें मन्दिरों में प्रवेश मना था[2]। मन्दिर के पास

1. ध्यान देना = चित्त लगाना
2. मना था = निषिद्ध था

वे जा नहीं सकते थे । अस्पृश्यता परम कोटि तक[1] पहुँची थी । सर्कारी स्कूलों में अवर्णों को प्रवेश मना था । इसलिये वे शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते थे । अधिकतर अवर्ण दरिद्र मज़दूर थे ।

अशिक्षित होने के कारण अवर्णों के बीच में कई प्रकार के अन्धविश्वास प्रचलित थे । उन्हें नैतिकता का बोध नहीं था । वे भूत-प्रेत आदियों की पूजा करते थे । जीवन की खूबियों[2] से वे परिचित नहीं थे । आत्मसम्मान उन में ज़रा भी[3] नहीं था । यह तो वर्षों की गुलामी का फल था ।

अवर्णों का अपना अपना पेशा था । समाज के अस्तित्व के लिए ये पेशे आवश्यक थे । पर समाज उन पेशों को घृणा की दृष्टि से[4] देखता था । क्यों कि उनको चलाने-वाले अवर्ण थे । अवर्ण तो पेट पालने[5] केलिए उन पेशों में लगे रहे । वे हर प्रकार से[6] परवश थे । उनकी स्त्रियाँ सवर्णों

---

1. परम कोटि तक = उच्चत तल तक
2. खूबियाँ = विशेषताएँ
3. ज़रा भी = थोडा भी
4. घृणा की दृष्टि से = अवज्ञा से
5. पेट पालना = जीवन बिताना
6. हर प्रकार से = एक एक रूप से

के सामने अर्द्ध-नग्न ही जा सकती थीं। इससे उनकी परवशता का पता चल[1] सकता है। ईसाई धर्म के प्रचार के फ़लस्वरूप इस परिस्थिति में कुछ न कुछ परिवर्तन हुआ। फिर भी समाज में अवर्णों का स्थान नीचा ही रहा।

अवर्णों में भी छुआ-छूत[2] प्रचलित थी। वे कुल महिमा पर झगडा किया करते थे। इस कारण उन में एकता नहीं थी। वे सहकारिता का प्रयोजन नहीं जानते थे। इसलिए उनमें सुधार का प्रश्न नहीं उठता था।

इतने में भारत में नवोत्थान का युग उदित हुआ। गोरों के विरुद्ध आवाज़ उठने लगी। स्वतंत्रता की माँग बुलन्द हुई। समत्व की भावना ज़ोर पकडने[3] लगी। सांप्रदायिकता, छुआ-छूत, वर्णभेद आदि अयथों का दोष अधिकाधिक विदित होने[4] लगा। अयथोच्चाटन के नारे देश भर में गूँज उठे[5]।

केरल के अवर्णों में भी इस नारे का असर पडा[6]।

---

1. पता चलना = सूचना मिलना
2. छुआ - छूत = अस्पृश्यता
3. ज़ोर पकडना = सुशक्त बनना
4. विदित होना = ज्ञात होना
5. नारे गूँज उठे = शब्द मुखरित हुए
6. असर पडना = प्रभाव होना

वे समझने लगे कि हम पतित हैं, मर्दित हैं, शोषित हैं। पर हम भी मानव हैं। हमें उठना चाहिए। मिलकर उठना चाहिए। सच्चा मनुष्य बनना चाहिए। पर कैसे? यही प्रश्न था। वर्षों की पराधीनता ने उनको दुर्बल बना दिया था। धार्मिक पराधीनता थी। आर्थिक पराधीनता थी। सांस्कृतिक पराधीनता थी। इन पराधीनताओं के नीचे वे दब गये[2] थे। वहाँ से उठना आसान नहीं था। इसकेलिए एकता की आवश्यकता थी। आत्मबल की आवश्यकता थी। ज्ञान की आवश्यकता थी। त्यागसन्नद्धता तथा साहस की आवश्यकता थी। पर अवर्णों में इन सब का पूर्ण अभाव था। सबल हाथ उनको उठा दे यही करणीय था। यही कामचलाऊ था। और यह भी आवश्यक था कि वह सबल हाथ अवर्णों के ही बीच में से उठे।

केरल के अवर्णों का भाग्योदय हुआ। उनके बीच में से एक सबल हाथ ऊपर उठा। उनके बीच में से एक दृढ स्वर ऊपर उठा, "एक जाती, एक धर्म, एक दैव मनुष्य के"। वह हाथ श्रीनारायणगुरु स्वामीजी का था। वह स्वर उन्हीं के हृदय से निकला था।

केरल के अवर्ण उद्बुद्ध हो गये। उनको सहारा मिला।

---

1. दब गये = अवमर्दित हुए

श्रीनारायण के नेतृत्व में वे अपने मानवी अधिकार प्राप्त करने कटिबद्ध हो[1] गये।

मानवता के उद्धार केलिए श्रीनारायणगुरु स्वामीजी ने आदर्श कार्य किये। उनमें भारतीय सभ्यता की छाप लगी[2] थी। "सादा जीवन और ऊँचा विचार" यही वह छाप थी। उनका जीवन अनुकरणीय था। उनका कार्य अमूल्य था। दृढ निश्चय के साथ अक्षीण यत्न करके उन्होंने रुकावटों का सामना किया[3]। अन्त में वे अपने लक्ष्य पर पहुँचे। यही उनका महत्व था। यही उनके अमरत्व का कारण था।

प्रश्न

1. महात्मा का जन्म कब होता है ?
2. अवर्णों और सवर्णों में क्या फरक था ?
3. अवर्णों की कौन कौन सी पराधीनताएँ थी ?
4. अयथोच्चाटन से अभिप्राय क्या है ?
5. आदर्श भारतीय सभ्यता की क्या छाप है ?

---

1. कटि - बद्ध होना = तैयार होना
2. छाप लगना = प्रभाव होना
3. सामना किया = प्रतिरोध किया

३. जन्म तथा बाल्य

केरल की राजधानी त्रिवेन्द्रम से सात मील दूर उत्तर की दिशा में "चेंपष़न्ति" नामक एक गाँव है। वहाँ एक छोटा सा मन्दिर है। उसका नाम है "मणकल मन्दिर"। इस मन्दिर के पास "वयलवारम" नामक एक छोटा सा घर आज भी दृश्यमान है। उस घर में सन् 1854 ई० में एक बालक पैदा हुआ। माता-पिताओं ने नवजात शिशु का नाम "नाणु" रखा। "नाणु" नारायण शब्द का विकृत रूप है। यही नाणु आगे चलकर[1] श्रीनारायण गुरु स्वामी बन गया था।

बचपन में वह बालक बडा नटखट[2] था। पर उसकी नटखटी विशेष प्रकार की थी। उसमें भविष्य के महत्व का बीज निहित था। पर उस समय यह बात किसी को नहीं मालूम हुई। उस समय किसी को गुमान[3] न था कि यह बच्चा आगे चलकर बडा त्यागी बनेगा, अपनी जाति का उद्धारक बनेगा।

---

1. आगे चलकर = भविष्य में
2. नटखट = उपद्रवी, चपल
3. गुमान = अनुमान

उनकी नटखटी का एक उदाहरण देखिए । मणक्कल मन्दिर में उत्सव था । पूजा की तैयारी हो रही थी । नैवेद्य की मिठाइयाँ एक थाल में रखी थी । नाणु ने वे मिठाइयाँ लेकर खायीं । यह तो बडा पाप समझा जाता था । लोगों ने नाणु को पकड लिया । एक तो अवर्ण बालक, तिसपर यह शरारत ! उन्होंने उससे पूछा — "तुमने ऐसा क्यों किया ? जानते नहीं कि यह महापाप है ?"

नाणु ने तुरन्त उत्तर दिया – "में खुश हो जाऊँ तो ईश्वर भी खुश होगा ।" यह सुनकर लोगों को आश्चर्य हुआ। इस बच्चे के मुँह से ऐसी बातें ! उन्होंने उसे छोड दिया ।

और एक दिन नाणु के घर में किसी की मृत्यु हुई। लोग रोने पीटने[1] लगे । अन्त में शवदाह आदि क्रियाकर्म पूरा हुआ । सब लोग खाने पीने और खुशी मनाने[2] लगे । इतने में[3] नाणु नदारद हो गया । लोग घबराए । लडका कहाँ गया है ? तलाशी शुरु हुई । अंत में लडका मिल गया। वह घर के पीछे एक झुरमुट में बैठा था। लोगों ने पूछा – "यहाँ क्यों बैठे हो ? काँटे चुभते नहीं ?" नाणु ने उत्तर

---

1. रोना पीटना = जोर से विलाप करना
2. खुशी मनाना = सन्तोष प्रकट करना
3. इतने में = इसके बीच

दिया – " कल तुम लोग रोते पीटते थे । अब खुशी मनाते लगे । मुझे यह देखकर असह्य हो गया । इसलिए यहाँ आकर बैठा हूँ । "

बचपन से नाणु स्वामी बडे दयाशील थे । एक दिन एक सन्यासी उनके गाँव आया । उसकी दाढी-मूँछ, जटा तथा गेरुआ कपडा देखकर गाँव के लडकों को कुतूहल हुआ । वे शोर मचाते[1] हुए सन्यासी के पीछे पीछे दौडने लगे । कुछ लडके उसपर ढेले दे मारने[2] लगे । यह देखकर नाणु का कोमल हृदय व्रणित हो गया । वह फूट फूटकर राने[3] लगे ।

अब तक[4] नाणु छे सात वर्ष के हो गये थे । घर वालों ने उनकी शिक्षा दीक्षा का प्रबन्ध करना चाहा । चेंपण्णन्ती मूत्तपिल्लै गाँव के गुरुनाथ थे । गाँव के सभी बच्चे उन्हीं के पास विद्या का श्रीगणेश करते[5] थे । नाणु ने भी मूत्तपिल्लै के पास जाकर विद्यारंभ किया । आरंभ से ही उनकी धिषणा

---

1. शोर मचाना = बहुत शब्द करना
2. ढेला दे मारना = पत्थर फेंकना
3. फूट-फूटकर रोना = उच्च स्वर में रोना
4. अब तक = इसके बीच
5. श्रीगणेश करना = आरंभ करना

शक्ति असाधारण थी। परन्तु वे अधिक दिन तक शिक्षा पा न सके। घर की परिस्थिति अनुकूल न थी। इसलिए उनको पढाई बन्द करनी पडी।

अब नाणु को घर के काम - काज में सहयोग देना[1] पडा। वे गाय - बैलों को चराना, खेत जोतना[2] आदि काम करने लगे। परन्तु ऐसे कार्यों में उनका मन नहीं लगता था। उन्हें आगे पढ़ने की इच्छा थी। उन्होंने मूत्तपिल्लै जी के पास दो तीन पाठ पढे थे। पेडों की छाया में बैठकर वे उन पाठों को रटा[3] करते थे

प्रातः स्नान, जप, भस्म चढाना आदि कर्मानुष्ठानों में वे दृढव्रती थे। कुछ बडे होने पर वे अपने गाँव से दूर तक भ्रमण करने लगे। कभी कभी बन्धु जनों के यहाँ वे ठहरते थे। भस्म चढाते, नामोच्चारण करते घूमने - फिरने वाले उस लडके को लोग "भक्त नाणु" कहकर पुकारने लगे।

उन दिनों नाणु चेचक का शिकार बने[4]। उन्होंने यह बात गुप्त रखी। अपने घरवालों से भी नहीं बताया।

---

1. सहयोग देना = भाग लेना
2. खेत जोतना = हल चलाना
3. रटना = दुहराना
4. शिकार बना = आहार बना

चेंपष्न्ति में भगवति का एक पुराना मन्दिर था। वहाँ पूजा वगैरह नहीं होती थी। इसलिए वहाँ कोई नहीं जाता था। नाणु स्वामी उस मन्दिर में जा लेटे। कोई दवा-दारू नहीं की। सवेरे और शाम मन्दिर के तीर्थ में स्नान और उसके बाद जप, यही उनकी चिकित्सा थी। अठारह दिन तक बीमारी दूर हुई। तब तो वे घर लौट आये। उनके मुख पर चेचक के दाग देखकर उनके मामा ने कारण पूछा। लडके ने सभी बातें साफ़ साफ़ बता दीं। सुनकर मामा स्तब्ध रह गये। दवा-दारू के बिना वह बच गया, इस पर सब लोगों को बडा आश्चर्य हुआ।

अब उनके घरवालों ने उनको फिर से पढाने भेजना चाहा। करुनागप्पल्लि नामक स्थान पर रामनपिल्लै नामक आचार्य संस्कृत की पाठशाला चलाते थे। नाणुस्वामी रामनपिल्लै जी का शिष्य बन गये। यहाँ उन्होंने तर्क वेदान्त आदि पढे। पढाई पूरी करने के पहले वे फिर से बीमार पडे। इसलिए घर लौट आये। उस के बाद उन्होंने पढाई जारी न रखी[1]। पर रामनपिल्लै जी के शिष्यत्व ने उनको पर्याप्त ज्ञान प्रदान किया था।

---

1. जारी रखना = आगे भी करते रहना

प्रश्न

1. श्री नारायणगुरुस्वामीजी का जन्म कब और कहाँ हुआ ?
2. उनके बचपन की दो तीन घटनाओं का वर्णन करो।
3. स्वामीजी ने किस के पास विद्यारंभ किया ?
4. लोग उनको क्यों "भक्त नाणु" कहते थे ?
5. चेचकवाली घटना का वर्णन करो।
6. किसके पास स्वामीजी ने संस्कृत की शिक्षा पायी ?

---

४. गार्हस्थ्य तथा सन्यास

भारत के पुराने ज़माने के आचार्यों ने मनुष्य के जीवन को चार स्तरों में विभक्त किया है। पहला ब्रह्मचर्य दूसरा गार्हस्थ्य, तीसरा वनवास और चौथा सन्यास है। इनको चार आश्रम कहते हैं। ब्रह्मचर्य में पढाई होती है। गार्हस्थ्य में पत्नी और संतान के साथ रहकर जीवन के सुखों का अनुभव करते हैं। वनवास में लौकिक जीवन से अलग होकर आध्यात्मिक जीवन आरंभ करने की तैयारी होती है। सन्यास में मनुष्य पूर्ण रूप से विरक्त होकर मृत्यु तक आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करता[1] है।

नाणुस्वामी ने ब्रह्मचर्य का पालन किया। अगला आश्रम गार्हस्थ्य था। पर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने के बाद उन्होंने सन्यास ले लिया।

करुनागप्पल्लि का अध्ययन बीच में स्थगित कर[2] स्वामीजी घर आये। यह हमने पिछले परिछेद में देखा।

थोडे दिनों तक वे चंगे हो[3] गये। अब तो वे स्वयं आचार्य बने और विद्यार्थियों को पढाते थे और रात भर

---

1. व्यतीत करना = व्यय करना
2. स्थगित करना = तात्कालिक रूप में बन्द करना
3. चंगा होना = आरोग्यवान होना

जप-ध्यान आदि में लगे रहते थे। उन्हीं दिनों भक्त नाणु, "नाणु गुरु" बन गये थे। अब उनकी बीस साल की उम्र थी।

इतने में उनके घरवाले उनको विवाह की प्रेरणा देने लगे। नाणुगुरु को गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने की इच्छा नहीं थी। लेकिन उनके घरवालों ने नहीं माना। उन्होंने वधु को निश्चित किया और विवाह का सारा प्रबन्ध कर दिया। नाणुगुरु समाज का विरोध न कर सके। सोचा, घरवालों की इच्छा है, चलो, विवाह भी हो जाय। विधिवत् विवाह हो गया।

बाद में पता चला कि नाणुगुरु लापता[1] है। लोगों ने सोचा नाणु कहीं गया है। अभी आयगा। लेकिन वे नहीं आये। दिन बीते, हफ्ते बीते, वर्ष बीते। पर नाणुगुरु नहीं आये। वे लोगों की दृष्टि से एकदम गायब हो[2] गये थे।

कई वर्ष बाद नाणुगुरु का पता चला। वे तिरुवनंतपुरम में "अय्याऊ" नामक योगीश्वर के पास योगविद्या सीख रहे थे। अय्याऊ स्वामीजी के पास दूसरा एक शिष्य भी था। उन

---

1. लापता होना = अदृश्य होना, चले जाना
2. गायब होना = अदृश्य होना

को लोग "चट्टंपि स्वामी" कहते थे। दक्षिण केरल में "परुमना" नामक प्रसिद्ध आश्रम है। उसका स्थापक यही चट्टंपि स्वामीजी हैं। वे जाति के नायर थे।

नाणुगुरु और चट्टंपि स्वामी दोनों अय्याऊ स्वामीजी के पास कई वर्ष तक योगविद्या का अभ्यास करते रहे। उसके बाद नाणुगुरु अपने आचार्य के उपदेश के अनुसार "मरुत्वामला" नामक पहाड पर तपस्या करने चले।

मरुत्वामला त्रिवेन्ड्रम की दक्षिण-पूर्वी दिशा में सह्याद्री की एक चोटी है। इस चोटी के संबन्ध में एक दन्तकथा प्रचलित है। राम-रावण युद्ध में लक्ष्मण बुरी तरह घायल हो गये। उनकी रक्षा करने के लिए मृतसंजीवनी की ज़रूरत पडी। यह बूटी हिमालय की द्रोणगिरि पर ही मिलती थी। हनुमान लंका से कूदकर हिमालय पहुँचा। फिर द्रोणाचल की चोटी तोड ली और उसको सिर पर लादकर फिर से आकाश मार्ग से लंका पहूँचा। दक्षिण केरल के ऊपर से जाते समय द्रोणाचल का एक हिस्सा टूटकर गिर पडा। वही मरुत्वामला है। इसी कारण इस चोटी पर बहुत सी जडी-बूटियाँ मिलती हैं।

मरुत्वामला के एक गुफ़े में अकेले बैठकर नाणुगुरु तपस्या करने लगे। उन्होंने खाना पीना सब छोड दिया। अय्याऊ स्वामीजी से उन्होंने योगविद्या का रहस्य प्राप्त किया था। अब वे उस विद्या का प्रयोग करने लगे।

एक दिन की बात है। नाणुगुरु को बडी भूख लगी। वे गुफ़े के बाहर आये और एक चट्टान पर बैठे। थोडी देर में उनके पास एक आदमी आया। उसके पास खाने की चीज़ें थीं। पर वह बडा कोढी था। उसके शरीर भर में सडे-गले[1] घाव थे। ऊँगलियाँ गलकर गिर गयी थीं। उसने कहा— "क्या गुरुजी को भूख लगती है? यह लीजिये, खाना खाइये।"

गुरुजी नहीं हिचके। उन्होंने खाना लेकर खाया। अचानक वह कोढी अदृश्य हो गया। योगाभ्यास करनेवालों को ऐसे अनुभव हुआ करते हैं। लोग कई प्रकार से इसकी व्याख्या करते हैं। संक्षेप में उनका मतलब यह है कि योगाभ्यास से नश्वर जीवन को अनश्वर आत्मा से मिलाकर अनश्वर करने का यत्न होता है। योगशास्त्र की भाषा में जीवात्मा को शरीर के अन्दर ही परमात्मा से मिलाने का

---

1. सडे-गले = जीर्ण

यत्न होता है। तब तो मनुष्य के अन्दर की दैवी शक्ति और पाशवी शक्ति में बडा द्वन्द्व होता है। इस द्वन्द्व के फलस्वरूप कई अनिर्वचनीय अनुभव होते हैं। ऐसे अनुभवों का तात्पर्य यह होता है कि साधक योगसिद्धि की ओर अग्रसर हो रहा है। अस्तु[1]।

मरुत्वामला में तपस्या पूरी करके गुरुजी निकल पडे। उन्होंने फिर कई दिन इधर उधर भ्रमण किया। वे केरल के बाहर भी गये। भिन्न भिन्न धर्मों के आचार्यों से मिले। ईसाई धर्म के सिद्धान्त पढे। इसलाम के सिद्धान्त पढे। देश-विदेश के आचार-विचारों की जानकारी प्राप्त की। अन्त में वे केरल लौट आये।

यहाँ आकर वे अवर्णों के बीच में रहे। कई दिन तक वे मछुओं की बस्ती में रहे। उनके साथ खाना खाया। उनको सहायता दी और उपदेश दिया। नीच जाति के लोगों ने उनका बडा सम्मान किया[2]। वे उनको नाणुगुरु स्वामी कहते थे। पर उनकी अपनी जाति के लोग उनको पागल समझते थे। वे उनकी निन्दा करते थे। लेकिन वह महान त्यागी इसकी क्या पर्वाह करता?

---

1. अस्तु = जो भी हो
2. सम्मान किया = आदर किया

वास्तव में सभी महात्माओं का यही अनुभव हुआ है। समाज ने पहले उनकी निन्दा की। लेकिन बाद में उनकी पूजा करने लगा। ईसा को उनके अपने समाजवालों ने क्रूस पर चढाया। श्री बुद्ध को उद्बुद्ध ब्राह्मण समाज ने बुरा-भला कहा[1]। हज़रत महम्मूद को अपने देश से प्राण लेकर भागना पडा। समाज की दृष्टि में वे सब पहले पागल थे, पथभ्रष्ट थे। पर बाद में[2] उनका महत्व स्वीकृत हुआ। नाणुगुरु स्वामी के संबन्ध में भी ऐसी बात हुई।

प्रश्न

1. चार आश्रम कौन कौन हैं ?
2. नाणुगुरु के विवाह के सम्बन्ध में क्या जानते हो ?
3. "चट्टंपि स्वामी" कौन थे ?
4. योगविद्या सीखने के बाद नाणुगुरु स्वामी ने क्या किया ?
5. मरुत्वामला सम्बन्धी दन्तकथा सुनाओ।
6. मरुत्वामला में नाणुगुरु का क्या अनुभव हुआ ?
7. तपस्या पूरी करके नाणुगुरु ने क्या किया ?

---

1. बुरा भला-कहा = क्रोध से बातें करना
2. बाद में = फिर

५. ईशः शिव

दक्षिण केरल की एक छोटी नदी है "नेय्यार" (घी की नदी)। उसके किनारे का प्रसिद्ध स्थान है "नेय्याट्टिनकरै" (घृत नदी का कूल)। नेय्यार सह्याद्रि से निकलती है और चट्टानों के बीच में से बहकर "शंकरन कुषि" (शंकरन कूप) नामक स्थान पर आ जाती है। आगे नदी चौडी होकर बह जाती है।

शंकरन कुषि पर नदी के किनारे एक टीला है। उसको "अरुविप्पुरम" (नदी का कूल) कहते हैं। नाणु गुरु स्वामीजी ने अरुविप्पुरम पर अपना आश्रम बनाया। यहाँ रहकर वे जनसेवा करने लगे। योगाभ्यास से उनको रोग दूर करने की सिद्धि मिली थी। इसलिये आसपास के रहने वाले गरीब लोग उनके पास आते थे और उनकी सिद्धि से लाभ उठाकर जाते थे। धीरे धीरे उनकी कीर्ति फैलने लगी।

शाम सवेरे आश्रम के पास बडी भीड लगती। उसमें अधिकतर अवर्ण ही थे। स्वामीजी उनको उपदेश देते, उनको भजन कीर्तन सिखाते और उनकी तरह तरह की[1] सेवा करते।

---

1. तरह तरह की = विविध प्रकार की

स्वामीजी ने अपना लक्ष्य स्थिर किया था। जाति-पाँति के कारण होनेवाली बुराइयों को दूर करना ही उनका लक्ष्य था। उनको मालूम था कि जाति-पाँति ही अवर्णों की बुरी दशा का कारण है। जाति-पाँति के कारण अवर्णों में कई प्रकार की बुराइयाँ फैल गयी थीं। उनको दूर किये बिना जाती-पाँति दूर नहीं हो सकती।

वे बुराइयाँ कौन कौन थीं? सब से बडी बुराई यह थी कि अवर्णों का आत्मविश्वास नष्ट हो गया था। इस सडी गली दशा में पडे रहेंगे, यही उनका विचार था। उनमें कई प्रकार के अन्ध विश्वास रूढमूल हो[1] गये थे। ईश्वर पर उनका विश्वास नहीं था। वे तो मन्दिर, में प्रवेश नहीं कर सकते थे। ईश्वर सवर्णों की पैतृक-संपत्ति है। यही उनका विश्वास था। वे सफ़ाई से रहना नहीं जानते थे। बाहर की अशुद्धि अन्दर भी घुस गयी थी। भूत-प्रेत आदियों की पूजा और बीभत्स कर्मानुष्ठान इसका परिणाम था। इन सब बुराइयों को एकदम दूर करना बाएँ हाथ का खेल[2] नहीं था। स्वामीजी ये बातें खूब जानते थे। इन बुराइयों पर धीरे धीरे आक्रमण करना था। स्वामीजी ने

---

2. रूढ मूल होना = जड दृढ होना
3. बाएँ हाथ का खेल = सरल कार्य

अवर्णों को पहले पहले भक्ति की ओर आकर्षित करना चाहा।

शिवरात्रि का दिन था। स्वामिजी ने अरुविप्पुरम पर एक छोटा सा मन्दिर बनवाया। नदी में से उन्हों ने एक गोल पत्थर भी ले रखा। शामको आश्रम में नियमानुसार बडी भीड लगी[1]। उन सब के सामने स्वामीजी ने मन्दिर में उस गोल पत्थर की प्रतिष्ठा की। उन्होंने लोगों से कहा "यही शिवलिंग है। शिवजी का स्मरण कर इसकी पूजा करो"

अन्धेरे में टटोलनेवालों को सहारा मिला। उनका अपना मन्दिर बन गया। अब वे अपने ईश्वर की पूजा कर सके, दर्शन कर सके। भूत-प्रेत आदियों की पूजा धीरे धीरे कम होने[2] लगी। अवर्णों का आत्माभिमान जागृत होने लगा। अब दूर खडे होकर प्यासी आंखों से मन्दिरों की ओर देखने की ज़रूरत नहीं थी। भगवान आखिर उनके पास आ गया। गरीब, अशिक्षित अवर्ण जनता को यह बडी बात थी।

---

1. भीड लगी = लोग इकट्ठे हुए
2. कम होना = नष्ट होना

सवर्णों को स्वामीजी का यह काम अच्छा न लगा[1]। उन्होंने स्वामीजी की निन्दा की। उनकी हँसी उडायी[2]। उनका विचार था कि ब्राह्मण ही मन्दिरों में प्रतिष्ठा कर सकते हैं। सवर्ण ही मन्दिरों में प्रवेश करने योग्य हैं। कुछ सवर्णों ने स्वामीजी के पास जाकर कहा –"तुमने यह क्या किया? सनातन धर्म के नियमों की भी हँसी उडाने लगे?"

स्वामीजी ने उनसे कहा — "आप लोग निश्चिन्त रहें। मैं ने आप का सनातन धर्म कुछ नहीं बिगाडा। मैं ने केवला ईषः शिव की प्रतिष्ठा की है।" "ईषः शिव" का मतलब है "ईषवों का शिव"। स्वामी जी ईषव जाति के थे। उनका उत्तर सुनकर बात पूछने वाले लज्जित हो गये। इस उत्तर से स्वामीजी ने उनको समझा दिया कि ईश्वर किसी की पैतृक संपत्ति नहीं है। उस पर सभी का हक है।

अरुविप्पुरम की प्रतिष्ठा के बाद स्वामीजी ने केरल के कई स्थानों में अवर्णों के लिए मन्दिर बनवाए। उन में अवर्ण ही पुजारी हुए। इस प्रकार स्वामीजी ने अवर्णों की धार्मिकता को जगा दिया। वे समूह में प्रार्थना करने लगे,

---

1. अच्छा न लगा = पसन्द न आया
2. हँसी उडाना = परिहास करना

पूजा करने लगे, भजनकीर्तन गाने लगे। यह तो समाज में एकता की नींव डाल[1] सका। अवर्णों के बीच में प्रचलित कई अनाचार भी इस कारण दूर हो गये।

स्वामीजी के यत्नों का अधिक प्रभाव उनके अपने जातिवालों पर ही पडा। ईषव जनता में नवोत्थान[2] का युग उदित हो गया।

अब तो पढे-लिखे लोग भी स्वामीजी के दर्शन करने आने लगे। सवर्ण हिन्दू आते थे। ईसाई आते थे। मुसलमान आते थे। वे उनके साथ धार्मिक चर्चायें करते थे। अब तक स्वामीजी के कई शिष्य भी हो गये थे। स्वामीजी ने खुल्लंखुल्ला जाति-पाँति की निन्दा की। वे हरिजनों को अपने पास बैठने देते थे। अपने शिष्यों को भी ऐसा करने की प्रेरणा दी। स्वामीजी ने छुआ-छूत निरर्थक साबित किया[3]। उनका कहना था—

"धर्म जो भी हो, मनुष्य को सुधरना चाहिए।"

---

1. नींव डालना = जड बनाना
2. नवोत्थान = नव जागृति
3. साबित करना = सुव्यक्त करना

प्रश्न

1. नाणुगुरु स्वामीजी ने पहले पहल कहाँ आश्रम स्थापित किया ?
2. अवर्णों में कौन कौन सी बुराइयाँ थीं ?
3. अरुविप्पुरम मन्दिर की स्थापना का बयान करो।
4. "मैं ने ईष:शिव की प्रतिष्ठा की है।" किस ने किस से कहा ? इसका क्या मतलब है ?
5. भिन्न भिन्न धर्मों के सम्बन्ध में स्वामीजी का क्या विचार था ?

६. महत्व के शृंग पर

स्वामीजी ने सन् 1902 में अरुविप्पुरम मन्दिर का संचालन करने[1] के लिए एक समिति बनायी । मृत्यु तक स्वामीजी ही उसका मार्ग निर्देशन करते रहे । यही समिति आगे चलकर "श्रीनारायण धर्म परिपालन संघ (एस० एन० डी० पी० संघ) बनी थी । इस संघ के द्वारा केरल के ईषवों का सामाजिक स्तर उठ[2] गया । अब तो ईषव समाज केरल की एक प्रमुख जनता है । आर्थिक, शैक्षणिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में वह अन्य किसी भी जनता के समान उन्नत हुई है । इस प्रकार केरल की एक प्रमुख जनता को सुसंस्कृत एवं शक्ति संपन्न कर देश का महत्व बढाने का एकमात्र श्रेय श्री नारायणगुरु स्वामीजी को है । इस कारण सारे केरलीय स्वामीजी के ऋणी हैं ।

उक्त[3] संघ की स्थापना के बाद स्वामीजी ने अरुविप्पुरम छोड दिया और "वर्कला" आये । वर्कला तो

---

1. संचालन करना = ठीक तरह से चलाना
2. स्तर उठना = उन्नत होना
3. उक्त = पहले कहा हुआ

पुराने ज़माने से भारत भर में "जनार्दनम" नाम से प्रसिद्ध है। यह भारत के कई प्रसिद्ध तीर्थ स्थानों में एक है ।

वर्कला में समुद्र के किनारे ऊँचा टीला है। उन दिनों यह टीला निर्जन था। स्वामीजी ने सन् 1903 में यहाँ एक आश्रम बनाया और उसमें रहे। उन्होंने उस टीले का नाम "शिवगिरि" रखा। यहाँ उन्होंने एक मन्दिर बनवाया और एक पाठशाला खोली। शिवगिरि में रहकर स्वामीजी ने अपना सार्वजनिक कार्य[1] बडी सफलता से किया था।

सन् 1918 में उन्हों ने श्रीलंका की यात्रा की और वहाँ भी अपना सन्देश सुनाया। सन् 1926 में भी उन्होंने श्रीलंका की यात्रा की थी।

स्वामीजी के यत्नों से ईषव जाति में नव जागृति हुई। वास्तव में उसी जागृति ने "वैक्कम सत्याग्रह" का रास्ता प्रशस्त किया[2] था। हम पहले देख चुके कि अवर्ण सवर्णों के मन्दिर में प्रवेश नहीं कर सकते थे। उतना ही नहीं, मन्दिर के पास जाना तक उनको मना था। अगर कोई सडक मन्दिर

---

1. सार्व जनिक कार्य = सर्वसाधारण - संबन्धी कार्य
2. रास्ता प्रशस्त करना = मार्गदर्शन कार्य

के सामने से होकर जाती थी तो अवर्णों को उस सड़क पर चलने की आज्ञा नहीं थी। इस अन्याय के विरुद्ध वैक्कम सत्याग्रह चला था।

गाँधीजी के अयथोच्चाटन का नारा केरल में भी बुलन्द हुआ। तब तो यहाँ के ईषव सत्याग्रह के लिए तैयार हुए। स्वामीजी ने उनको प्रोत्साहन दिया। महात्माजी ने उनको विजय की आशीष दी।

उत्तर त्रावेन्कोर के वैक्कम नामक स्थान का मन्दिर बहुत पुराना है। उसके सामने से सडक बनी है। उधर से चलने के लिये ईषवों ने सत्याग्रह आरंभ किया। कुछ उदार चित्त सवर्णों ने भी इस में सहयोग दिया[1]। इसी को "वैक्कम सत्याग्रह" कहते हैं। यह सत्याग्रह भारत भर में प्रसिद्ध हुआ। क्यों कि यह तो जाति-पाँति की जड पर मारी पहली कुल्हाडी थी। अवर्णों की जागृति का पहला शंख-नाद था।

वैक्कम सत्याग्रह के दिनों, सन् 1923 में महात्माजी केरल आये। वे शिवगिरि जाकर श्रीनारायणगुरु स्वामीजी से मिले। दोनों बडी देर तक आपस में बातचीत करते रहे। उसके बाद ये दोनों महात्मा अंत तक आत्ममित्र रहे।

---

1. सहयोग देना = साथ मिलकर काम करना

इसके एक वर्ष पहले विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर केरल आये थे। उन्होंने स्वामीजी के बारे में सुना था। वे भी शिवगिरि जाकर स्वामीजी से मिले थे। महाकवि स्वामीजी की बातों से बहुत प्रभावित हुए थे।

अब तो स्वामीजी सब लोगों से सम्मानित थे। अवर्ण-सवर्ण सब ने उनका महत्व स्वीकार किया। अवर्ण तो उनकी हर किसी आज्ञा का पालन करने को कटिबद्ध हो गये। स्वामीजी इस मौके को खूब काम में लाये[1]। उन्होंने अवर्णों में प्रचलित कई अनाचारों का अंत कर दिया। यह तो उनका सब से महान सार्वजनिक कार्य था।

स्वामीजी मिश्रविवाह के विरुद्ध नहीं थे। ईषव जाति का एक व्यक्ति विलायत में ऊँची शिक्षा प्राप्त कर लौट आये। उन्होंने एक पाश्चात्य वनिता से विवाह करना चाहा। पर उनके घरवालों ने इसका घोर विरोध किया। उनका विचार था कि विजातीय विवाह से कुटुंब का भ्रष्ट हो जायगा। तब तो वह व्यक्ति शिवगिरि जाकर स्वामी जी से मिले। स्वामी जी ने उनके पिता को बुला भेजा और उनको समझा बुझाकर[2] विवाह की अनुमति दिला दी। विवाह तो शिव-

---

1. काम में लाना = उपयुक्त करना
2. समझा बुझाना = सान्त्वना देना

गिरि पर ही हुआ। आचार्य रहे स्वयं श्री नारायण गुरु स्वामीजी।

स्वामीजी ने संस्कृत भाषा का महत्व खूब समझ लिया था। भारतीय संस्कृति में संस्कृत भाषा का स्थान वे भली भाँति[1] जानते थे। स्वयं स्वामीजी ने संस्कृत का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया था। उनका विचार था कि हर भारतीय को संस्कृत भाषा की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। केरल की आम जनता में संस्कृत का प्रचार आरंभ करने के उद्देश्य से उन्होंने आलवै में अद्वैताश्रम खोला। यहाँ विद्यार्थियों को संस्कृत शिक्षा देने का प्रबन्ध कर दिया।

स्वामीजी के पास हमेशा अनेक शिष्य रहते थे। स्वामीजी उनसे ग्रन्थों का पारायण कराते थे और उनको उनका अर्थ समझा देते थे। दूसरों को ज्ञान की बातें बता देने में वे हमेशा जागरूक रहते थे। उनके पास ज्ञान की संपत्ति थी। उसका वे निर्लोभ वितरण करते थे।

स्वामीजी ने दीनदुखियों का उद्धार अपने जीवन का लक्ष्य स्थिर किया था। दृढ व्रत, आत्मत्याग और कर्मकुशलत के द्वारा उन्होंने अपना लक्ष्य प्राप्त किया। इस

---

1. भली-भांति = अच्छी तरह

प्रकार भारत के संत महात्माओं की संख्या में एक नंबर और जोडकर सन् 1928 सितंबर २० वीं तारीख को श्रीनारायणगुरु स्वामीजी शिवगिरि के आश्रम में समाधिस्थ हो गये। तब उनकी 74 साल की उम्र थी।

स्वामीजी का भौतिक शरीर संसार से अदृश्य हो गया। पर उनके उपदेश और उनके सिद्धान्त आज भी ध्रुवतारे की तरह लोगों को मार्ग दिखा रहे हैं।

प्रश्न

1. एस० एन० डी० पी० किसे कहते हैं ? उसकी स्थापना कब हुई ?
2. "शिवगिरि" की स्थापना कब हुई ?
3. वैक्कम सत्याग्रह क्यों चला ?
4. किन किन महात्माओं ने स्वामीजी से भेंट की ?
5. स्वामीजी कब समाधिस्थ हुए ?

७. पश्चाद्दर्शन

श्रीनारायणगुरु स्वामीजी ने संस्कृत, मलयालम और तमिष़, तीनों भाषाओं में पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया था। वे कवि भी थे। अपने सिद्धान्तों को उन्हों ने छन्दबद्ध किया[1] है। इसके अलावा उन्होंने कई भजन कीर्तन भी रचे हैं। इसमें स्वामीजी को अपनी कवित्व शक्ति प्रकट करने का उद्देश्य नहीं था। उन्होंने इस में कबीरदास का रास्ता अपनाया है। याने काव्यशास्त्र की ओर अधिक ध्यान न देकर केवल भाव को प्रधानता देते थे।

शिक्षा ही स्वामीजी की कार्यवाही का केन्द्र था। उन्होंने कई स्थानों पर अवर्णों के लिए पाठशालाएँ खुलवाईं। पाठशाला के साथ मन्दिर भी बना देना उनकी रीति थी। उन्होंने सौ तक मन्दिरों की स्थापना की थी। यह तो वास्तव में धार्मिक क्षेत्र में ब्राह्मणों के परमाधिकार के प्रति चुनौती[2] थी। स्वामीजी मूर्तिपूजा का विरोध नहीं करते थे। विचलित जनता को भक्ति की ओर आकर्षित करने केलिए उन्होंने यही उचित उपाय समझा होगा।

---

1. छंदबद्ध करना = कविता के रूप में लिखना
2. चुनौती = ललकार

भक्ति के प्रचार में स्वामीजी का लक्ष्य मोक्ष-प्राप्ति से बढकर समाजोद्धार था । क्योंकि वे जानते थे कि स्थिर धरातल पर पैर जमाकर[1] ही कोई ऊपर उछल सकता है । सामाजिक दुर्गति में उदात्तभाव कैसे उत्पन्न हो सकती हैं? जिनके आपस का छत्तीस वाला नाता था[2] उनको सुसंघटित करने के लिए स्वामीजी ने भक्ति को साधन बनाया । समूह-बोध ही सामाजिक दृढता की आधारशिला है । मन्दिरों द्वारा जनता में समूह-बोध उत्पन्न हो सकता था । इसीलिए स्वामीजी ने अरुविप्पुरम के मन्दिर के सामने पत्थर पर खुदवाया – "यह ऐसा आदर्श स्थान है जहाँ सब लोग जाति भेद और धर्मविद्वेष के बिना भ्रातृ-भाव से रहते है।"

इस वाक्य का सारांश स्वामीजी ने भिन्न भिन्न शब्दों द्वारा प्रकट किया है । वे कहा करते थे — "मनुष्य के एक जाति, एक धर्म तथा एक ईश्वर हो।" वे उपदेश देते थे कि धर्म चाहे जो भी हो, मनुष्य को सुधारना चाहिए ।

जाति के संबन्ध में कबीरदास ने कहा – "जाति न पूछो साधु की।" पर स्वामी जी ने एक कदम आगे बढकर कहा —" किसी से भी जाति न पूछो, किसी से जाति न

---

1. पैर जमाना = प्रबल होना
2. छत्तीस वाला नाता = परस्पर विरुद्धता

बताओं, जाति का ख्याल तक न करो।"

एक दिन स्वामीजी रेल से कहीं जा रहे थे। डिब्बे में अन्य लोगों के साथ एक नंबूद्रिपद भी थे। स्वामीजी के ज्ञान की बातें सुनकर नंबूद्रिपद विस्मित हो गये।

उन्होंने स्वामीजी से पूछा—"आपका शुभनाम क्या है?"

स्वामीजी—"नारायण।"

नंबूद्रिपद—"कौन जात है?"

स्वामीजी—"क्या देखने से नहीं मालूम होता?"

नंबूद्रिपद—"नहीं तो।"

स्वामीजी—"जो देखकर नहीं समझता वह सुनकर कैसे समझेगा?"

स्वामीजी केवल एक जाति को मानते थे। वह मनुष्य जाति थी। वे कहते थे—"गायों का गायपन होता है। उसी प्रकार मनुष्य का मनुष्यत्व होता है। ब्राह्मण आदि जाति-भेद झूठ है। पर खेद की बात है कि सत्य-दर्शी[1] कोई नहीं होता।"

प्रेम का सन्देश स्वामीजी के उपदेशों में मुख्य था। उन्होंने कहा कि संसार की सेवा करना मनुष्य का धर्म है।

---

1. सत्यदर्शी = सत्य को देखनेवाला

अपने सुख केलिए दूसरों को दुख देना नहीं चाहिए। अपने सुख के लिए ऐसा काम करना चाहिए जो दूसरों को भी सुख दे सके। पडोसी की भलाई के लिए यत्न करने वाला मनुष्य ज्ञानी है।

भ्रातृ-भाव पर स्वामीजी बहुत ज़ोर देते[1] थे। मनुष्य-मनुष्य में ही नहीं, मनुष्य और अन्य सभी जीवों में भी भ्रातृ-भाव हो, यही उनका उपदेश था। तभी तो अहिंसा का पूरा पूरा पालन हो सकता है। स्वामीजी नहीं समझ सकते थे कि मनुष्य कैसे जीवहत्या कर सकता है। वह इतना निर्दय कैसे हो सकता है? उन्होने जीवहत्या, मांसाहार दोनों को बुरा कहा।

एक दिन एक शिष्य ने उनसे पूछा "गुरो, हम गाय बकरियों का दूध पीते हैं। फिर उनका मांस क्यों न खायें?"

स्वामीजी ने मुस्कुराकर कहा – "क्यों नहीं? खा सकते हैं।" थोडी देर बाद उन्होंने उसी शिष्य से पूछा — "क्या तुम्हारे माँ हैं?"

शिष्य — "नहीं स्वामीजी। मर गयीं।"

---

1. ज़ोर देना = दृढ रूप में कहना

स्वामीजी — "उनका मृतशरीर गाड दिया था या खा लिया ?"

स्वामीजी शराब खोरी[1] का घोर विरोध करते थे। केरल के अवर्णों के बीच में ताडी पीना साधारण बात थी। इससे उनकी बडी हानि होती थी। ताडी बनाने वाले, बेचनेवाले ओर अधिकतर पीनेवाले अवर्ण थे। इसलिये स्वामीजी ने कहा— "शराब मत बनाओ, मत बेचो, मत पीओ।"

त्याग की महत्ता पर स्वामीजी ज़ोर देकर बोलते थे। उनका अपना जीवन ही त्याग का पर्याय था। उन्होंने कहा कि मनुष्य के सभी कर्मों का ध्येय त्याग हो। धन कमाना बुरा नहीं। पर वह स्वार्थ के लिए नही, परार्थ के लिए हो। धन क्या, मनुष्य को अपने प्राण तक दूसरों की भलाई के लिए छोडने को तैयार रहना चाहिए। त्याग के बिना जन-सेवा निरर्थक शब्द है।

सफ़ाई की ओर स्वामीजी लोगों का विशेषकर ध्यान आकर्षित करते थे। स्नान करना, साफ़ कपडा पहनना, साफ़ खाना खाना, घर और परिसर को साफ़ रखना आदि अत्यन्तापेक्षित हैं। सफ़ाई सभी गुणों की माता है।

---

1. शराब खोरी = मद्यपान

स्वामीजी ने केवल आध्यात्मिक अभिवृद्धि पर ध्यान नहीं दिया, अवर्णों की सर्वतोन्मुखी उन्नति उनका लक्ष्य था। उन्होंने स्थान स्थान पर विद्यालय तथा वाचनालय खोलने की प्रेरणा दी। मन्दिर के उत्सवों तथा विवाह आदि कार्यों में धन व्यय न करके एतादृश[1] कार्यों में व्यय करने का उपदेश दिया। उन्होंने धनी लोगों से कारोबार में पूँजी लगाने[2] का अनुरोध किया। स्वामीजी के यत्न से केरल में पहले पहल व्यावसायिक प्रदर्शनी संपन्न हुई[3]।

इस प्रकार अवर्णों की उन्नति के लिए काम करते हुए स्वामीजी ने अवर्ण-सवर्ण सब में एकता तथा मैत्री बढाने का भी यत्न किया। आलवै का "सर्व-मत-सम्मेलन" (सन् 1923 ई) इसका परिणाम था।

श्री नारायणगुरु स्वामीजी के जीवन का अध्ययन करने पर हमें यह बात बलात् आकर्षित करती है कि मनुष्य चाहे किसी भी जाति का हो, वह अपने यत्न से महत्व के शिखर तक पहुँच सकता है। जाति, अर्थिक दशा कुछ भी

---

1. एतादृश = इस प्रकार के
2. पूँजी लगाना = धन व्यय करना
3. संपन्न होना = पूर्ण रूप से चलना

उसके अक्षीण यत्त के सामने बाधा न डालेगा। उद्देश्य की शुद्धि हो, दृढनिश्चय हो, अक्षीण यत्न हो। मनुष्य अपने जीवन को अमर कर सकेगा।

प्रश्न

1. श्रीनारायण गुरुस्वामीजी के मुख्य उपदेशों की सूची तैयार करो।

This is a very good book
LKA

GOVT. ARTS COLLEGE HIGH SCHOOL
TRIVANDRUM

PRINTED AT
ALLIANCE PRINTING WORKS,
THYCAUD, TRIVANDRUM.
1957

MOHAN PUBLICATIONS

(HINDI)

Standard VIII

1. Dhanush Yagna
2. Sri Narayana Guru
3. Shatru Tadha Mitra
4. Phool Aur Taare
5. Viphal Prem

Standard IX

1. Radio
2. Gouri Shankar
3. Eesa Maseeh
4. Shamadan
5. Bachom Ka Bharat

Standard X

1. Ek Doure Ki Kahani
2. Kavivar Ravindranath
3. Shakuntala
4. Vyomayan Kikatha
5. Sadik

Standard XI

1. Veluthampi
2. Shivaji
3. Sanskriti Ka Ithihas
4. Nala Chritham
5. Do Kahaniyam

APPLY TO

K. PRABHAKARAN NAIR
KAVUVILA HOUSE
JEGATHY, TRIVANDRUM.

Cover Printed at Jayaram Press, Trivandrum.